eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 08, Issue 02, July 2025

घरेलू हिंसा में पारिवारिक अदालतों की भूमिका

डा0 स्वाती सक्सेना[1] व कुलदीप तिवारी[2]
[1]विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग डी.जी.पी.जी. कालेज कानपुर नगर, उ0प्र0
[2]शोध छात्र, शिक्षाशास्त्र विभाग डी.जी.पी.जी. कालेज कानपुर नगर, उ0प्र0

Received: 20 July 2025, Accepted: 25 July 2025, Published with Peer Reviewed on line: 31 July 2025

Abstract

भारत विविधताओं से सम्पन्न देश है, यह वह देश है जहाँ सर्वप्रथम भारत भूमिखण्ड को एक माँ का दर्जा दिया गया है और इसी सभ्यता के प्राचीन ग्रंथो में उल्लेखित किया गया है "यत्र नार्यस्तु पूज्यते, रमंते तत्र देवता" अर्थात् जहाँ पर नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता वास करते हैं। परन्तु समय हमेशा गतिमान है और समय के साथ–साथ सभ्यता अपना स्वरूप बदलती रहती हैं। आधुनिक समय में जिसे हम आधुनिक इतिहास का काल 1857 ई० से मानते हैं। स्त्रियों की दशा अत्यन्त दयनीय रही और उनकी सामाजिक स्थिति में गिरावट का संकेत देती है, जिसने हमारे देश की सभ्यता व संस्कृति पर गहरा प्रभाव डाला। भारत एक विविधताओं से भरा देश है परन्तु देश में महिलाओं के साथ लगातार घरेलू और बाहरी हिंसा का बढ़ता ग्राफ इस खतरनाक सीमा तक पहुँच गया हो जिससे सामाजिक ताने–बाने को खतरा उत्पन्न हो गया, जबकि देश की राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष समेत तमाम महत्वपूर्ण पदों पर महिलाएँ हैं और रह चुकी हैं। वहाँ समाज की सभी वर्ग की महिलाओं के साथ शारीरिक मानसिक लैंगिक हिंसा व भेद–भाव ने हमें सोचने पर विवश किया है। एक सर्वे में यह तथ्य सामने आया कि भारत में लगभग 65 से 70 प्रतिशत महिलाएं किसी न किसी रूप से घरेलू हिंसा का शिकार है। क्योंकि आज भी भारतीय समाज एक पितृ सत्तात्मक समाज है, जिसमें समाज, परिवार या घर से जुड़े फैसलों को लेने का अधिकार पुरुष का ही होता है महिलाओं को ना के बराबर फैसला लेने में शामिल किया जाता है। भारतीय समाज की जड़ो में व्याप्त इस रूढिवादिता को समाप्त करना और समाज को संर्कीण दायरे से बाहर ला के एक प्रगतिशील समाज के रूप में स्थापित करना ही हमारा उद्देश्य होना चाहिए।

मुख्य शब्द– भारतीय समाज, गरिमा, घरेलू हिंसा, पारिवारिक अदालतें

Introduction

भारत में घरेलू हिंसा से सुरक्षा के लिए भारत सरकार द्वारा "घरेलू हिंसा अधिनियम 2005" बनाया गया, परन्तु महिलाओं की इस विषय पर उदासीनता, सामाजिक डर अथवा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर ना होने के कारण अपने मूलभूत अधिकारों से वंचित रह जाती है। समान्तयः लोगों द्वारा घरेलू हिंसा का अर्थ पति द्वारा पत्नी पर की गयी शारीरिक हिंसा से होता है, परन्तु इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है, जिसमें माता, बहन, पत्नी, विधवा स्त्री, पार्टनर और बच्चे भी आते हैं। यहाँ पर किसी महिला के ऊपर केस नहीं किया जा सकता, यह इस अधिनियम की विशेषता है। घरेलू हिंसा से सम्बन्धित अभी तक कई मामले प्रकाश में आये, जिसमें साहनी हत्याकांड, जेसिका लाल से लेकर मधुमिता हत्याकांड तक ऐसी हत्याओं – हिंसाओं की लंबी श्रृंखला है। ऊपर वर्णित मामले अत्यन्त चर्चित और हाई प्रोफाइल होने के कारण प्रकाश में आ गए, लेकिन ऐसे लाखों अन्य मामले शायद ही कभी बाहर पाते हैं। जिनमें महिलाओं को घुट घुट, हिंसा व

eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 08, Issue 02, July 2025

प्रताड़ना सहते हुए जीना पड़ता है। यह हमारे समाज की एक विकृति है जो समाज के अन्दर व्याप्त है, जिसे सरकार द्वारा विभिन्न कानूनों के माध्यम से दूर करने का अथक प्रयास जारी है।

घरेलू हिंसा के कई प्रकार हैं परन्तु सामाजिक रूप से शारीरिक प्रताड़ना को ही हिंसा माना जाता है जबकि घरेलू हिंसा में शारीरिक हिंसा, यौन हिंसा, मौखिक या भावनात्मक हिंसा और आर्थिक हिंसा भी शामिल है, यहाँ आर्थिक हिंसा में नौकरी न करने देना या दहेज की माँग मुख्य रूप से आती है। इसमें यह समझना भी अति आवश्यक है कि घरेलू हिंसा होने के मुख्य कारण क्या होते हैं, क्योंकि बिना कारण जाने हम किसी भी समस्या का निवारण नहीं कर सकते हैं। घरेलू हिंसा के प्रमुख कारण में सबसे प्रमुख समस्या पति का शराब पीना है, जिसके कारण परिवार में हिंसा, लड़ाई झगड़ा और आर्थिक समस्या उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त पुरूषों का महिलाओं पर शक करना उनके चरित्र पर प्रश्न चिह्न लगाना, जिससे परिवार के आपसी सम्बन्धों के बीच विश्वास की भावना में कमी आती है और पारिवारिक हिंसा का जन्म होता है। एक अन्य कारण पुरुष का अपने पर भरोसा ना होना और गुस्सा काबू न कर पाना, जिसके फलस्वरूप मारपीट और हिंसा का जन्म होता है और यह समस्या सामाजिक व पारिवारिक दोनों तरह की है, इसमें लोगों का पिछड़ी सोच का होना व दहेज की माँग करना जिससे पारिवारिक क्लेश उत्पन्न होता है और परिवार विखण्डित होते हैं।

यहाँ पर यह समझना अति आवश्यक है, कि महिलाएं घरेलू हिंसा क्यों सहती हैं क्यों वे खुलकर उसका प्रतिरोध नहीं करती या कर पाती है। इस समस्या का सबसे महत्वपूर्ण कारक है, महिलाओं का आत्मनिर्भर न होना वे आर्थिक रूप से पुरुषों या परिवार के अन्य किसी सदस्य पर निर्भर होती हैं जिसके कारण वह स्वतंत्र रूप से निर्णय नहीं ले सकती। इसके अतिरिक्त लिंग असमानता जैसे उन्हें पुरुषों से कम समझना, पुरुषों से कमजोर माना जाना, ऊँची आवाज में बात करने पर समाज व लोगों के द्वारा बुरा मानना, पर्दे में रहना आदि रोक–टोक आदि इसके अतिरिक्त सामाजिक सहनशीलता जिसमें यह कि समाज क्या कहेगा अगर महिलाएं घर की समस्या पर बाहर बात करेंगीं तो लोग उनका मजाक बनाएंगे और पुरुषवादी समाज होने के कारण उनको ही दोषी ठहराया जाएगा। उनकी बात को लोगों द्वारा सभी परिवारों में होने वाली सामान्य घटना की तरह ही मानेगें। समाज द्वारा महिलाओं को शारीरिक रूप से कमजोर समझना भी एक मुख्य कारण है जबकि आज महिलाएं लगभग सभी क्षेत्रों में पुरुषों के एकाधिकार को चुनौती दे रही है, वे उन सभी कार्यों में बढ़–चढ़ कर हिस्सा ले रही है जो कुछ समय पहले पुरुष प्रधान समझे जाते थे चाहें वह सेना हो पुलिस हो या अन्य कोई क्षेत्र हो।

घरेलू हिंसा का प्रभाव महिलाओं के मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य पर अत्यंत बुरा होता है, क्योंकि महिलाएं भावुक होती हैं उन पर छोटी–छोटी बातों का ज्यादा प्रभाव पड़ता है जिसके कारण उनको कई तरह की समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं, जो मानसिक, शारीरिक या दोनों तरह की हो सकती हैं। जैसे अभिघातजन्य तनाव विकार हो जाता है जिससे उनके मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य पर उस बुरी घटना की छाप हमेशा रह जाती है और जीर्ण अवसाद के कारण थकावट, कमजोरी, किसी भी गलत कार्य के लिए स्वयं को दोषी मानना आदि लक्षण आ जाते हैं। इस तरह अवसाद ग्रस्त होने पर महिलाएं आत्महत्या के लिए सोचना या प्रयास करना आदि का प्रयास करती हैं। स्वयं को शारीरिक क्षति पहुंचाने वाले कार्य करने लगती हैं। घरेलू हिंसा के कारण महिलाएं ठीक से सो नहीं पाती और अनिंद्रा का शिकार हो जाती हैं जिससे उनकी मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है और इससे महिलाओं में चिंता

eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 08, Issue 02, July 2025

तनाव और अवसाद का उत्पन्न होना सम्मिलित है। मुख्यतः यह सभी महिलाओं को एक बुरी स्थिति में लाकर खड़ा कर देते हैं, जहाँ से उन्हें निकालने में काफी समय लगता है या फिर भी कभी निकल ही नहीं पाती हैं।

घरेलू हिंसा का प्रभाव सिर्फ महिलाओं पर ही नहीं पड़ता अपितु यह सम्पूर्ण परिवार को प्रभावित करता है, लेकिन महिलाओं के पश्चात इसका सर्वाधिक व दीर्घकालीन प्रभाव बच्चों पर पड़ता है। जिससे बच्चों में अनेक प्रकार की समस्या उत्पन्न हो जाती हैं, जो मानसिक व शारीरिक रूप से उनके कोमल मन – मस्तिष्क पर प्रभाव डालते हैं जिसके कारण बच्चों में खुद पर भरोसा कम हो जाता है, उनमें घबराहट व चिंता बढ़ती है जो बच्चे अपने घरों में घरेलू हिंसा देखते हैं, वे डर, गुस्सा, उलझन, आत्मग्लानी की भावना से ग्रसित हो जाते हैं। ऐस बच्चों का व्यवहार चिड़चिड़ा हो जाता है, वह किसी पर भरोसा नहीं करते, आत्महत्या के बारे में सोचते हैं, और सबसे बुरी बात कि वह सामाजिक रूप से घुलमिल नहीं पाते व अकेला रहना पसंद करते हैं क्योंकि उन्हें डर होता है कि सब सामाजिक रूप से उनका मजाक उड़ाएंगे, उन्हें हेय दृष्टि से देखेंगे या उनके साथ बुरा बर्ताव करेंगें। इस प्रकार घरेलू हिंसा हमारे वर्तमान को ही नहीं बल्कि भविष्य पर भी अत्यन्त बुरा प्रभाव डालती है।

घरेलू हिंसा से सम्बन्धित मामलों में वर्ष 2006 से प्रभावी घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005 को मील का पत्थर माना जा सकता है। इसमें कोई भी महिला कहीं भी केस दर्ज कर सकती है और महिला की सुरक्षा के लिए मजिस्ट्रेट एक प्रोटेक्शन ऑर्डर देगा, विक्टिम महिला को कानूनी कार्यवाही में मदद दी जाएगी और मानसिक और शारीरिक चोट के लिए सबसे पहले उसे मुफ्त चिकित्सी सहायता पहुंचायी जाएगी और अगर महिला के पास घर नहीं है, तो उसे शेल्टर होम भी प्रदान किया जाएगा अगर विक्टिम महिला रिपोर्ट दर्ज कराती है, तो इस अधिनियम के तहत उसे घर से नहीं निकाला जा सकता, चाहें घर किसी के भी नाम पर हो या अधिकार में परन्तु विक्टिम महिला को खतरा है तो उनकी सुरक्षा के लिए उसे किसी अन्य स्थान पर ले जाया जा सकता है। विक्टिम महिला की माँग पर उसे बच्चों की कस्टडी दी जा सकती है। इस कानून का उल्लंघन होने की स्थिति में जेल के साथ जुर्माना भी हो सकता है। यहां पर यह भी प्रावधान है कि वाद का निपटारा मजिस्ट्रेट 60 दिन के भीतर करेगा घरेलू हिंसा सिर्फ महिलाओं तक ही सीमित नहीं नेशनल फैमिली हेल्थ द्वारा 2004 में एक सर्वे किया गया था जिसमें पता चला कि 1.8 प्रतिशत पुरुष ऐसे हैं जिनके ऊपर महिलाओं द्वारा घरेलू हिंसा होती है यहां पुरुष पिटता है परन्तु वह समाज के कारण इसकी रिपोर्ट दर्ज नहीं करता क्योंकि समाज किसी पुरुष का महिला द्वारा पीटना बुरा मानता है और वह पुरुष मजाक का पात्र बनकर रह जाता है जिसके कारण ऐसे मामले प्रकाश में नहीं आते हैं।

इस देश के नियंताओं ने सदा ही वैधानिक रूप से महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार देने में भी कंजूसी नहीं दिखाई। विकसित कहे जाने वाले कई राष्ट्रों के उलट भारत में काफी पहले से ही महिलाओं को तमाम कानूनी अधिकार दिए गए लेकिन समाज का रवैया निसंदेह कानून और संविधान से ज्यादा रूढ़िवादी रहा है। उसने स्त्रियों को देवत्व देना तो स्वीकारा है, लेकिन उन्हें भी हर मामले में समानता का अधिकार मिले इस विचार को आज भी समाज मन से स्वीकार करने को तैयार नहीं है। खाप पंचायत से लेकर तमाम धर्मान्ध समूह तक की मान्यताएं अक्सर कानून से ज्यादा महत्त्व पा जाती हैं। जन दबाव या वोट बैंक के लालच में भी कई बार महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित कर दिया जाता है। इसका

eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 08, Issue 02, July 2025

सबसे बड़ा उदाहरण शाहबानो मामला है, जिसमें 1986 सुप्रीम कोर्ट द्वारा पीड़ित महिला को दिए गए न्याय को सरकार द्वारा वोट बैंक के लालच में झुकते हुए कानून बनाकर उस फैसले को रद्द करना पड़ा था। यही ऐसा पुरुषवादी अहंकार है जो आज भी मानता है कि अंततः नारियाँ पुरुषों से दोयम दर्जा रखती हैं और उन पर शासन करना उन्हें प्रताड़ित करना उचित है। इस सम्बम्ध में एक सरकारी सर्वे के अध्ययन के अनुसार देश के 51 प्रतिशत पुरुष और 54 प्रतिशत महिलाओं ने पत्नियों की पिटाई को सही ठहराया था। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है की पिटाई को सही ठहराने में महिलाओं का प्रतिशत ज्यादा होना बड़े स्तर पर समाजशास्त्री विश्लेषण की माँग करता है। जबकि वह स्वयं महिलाएं है। महिलाओं की समस्याओं से पूर्ण रूप से परिचित होती हैं।

संविधान निर्माता ने सदैव लैंगिक बराबरी को दृष्टिगत रखते हुए काम किया है। संविधान के अनुच्छेद 14 में जहां महिलाओं को कानून के समक्ष समानता का अधिकार है, वही अनुच्छेद 15 राज्य द्वारा धर्म, नस्ल, जाति, लिंग और जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव न करने की गारंटी प्रदान करता है। जबकि अनुच्छेद 16 के अन्तर्गत अवसर की सामानता से लेकर, महिलाओं को अनुच्छेद 39(घ) में पुरुषों और महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन का भी अधिकार है। इतना ही नहीं संविधान के अनुच्छेद 51(ए) (ई) के तहत महिलाओं की गरिमा के लिए अपमानजनक प्रथाओं का परित्याग करने और अनुच्छेद 42 में काम की उचित एवं मानवीय परिस्थितियाँ सुनिश्चित करने एवं प्रसूति सहायता के लिए राज्य द्वारा प्रावधानों को तैयार करने की भी अनुमति है। इसके अतिरिक्त 1961 में भारत सरकार द्वारा दहेज अधिनियम पारित किया गया। परन्तु इन्हें अमल में लाने व महिलाओं को उत्पीड़न से मुक्ति दिलाने अथवा दोषियों को उपयुक्त सजा दिलाने के लिए सन 1984 में पारिवारिक अदालतों फैमिली कोर्ट का गठन किया गया था इससे भी समस्याओं के समाधान की उम्मीद बँधी और वर्तमान समय में पारिवारिक अदालतें व्यापक रूप से अपने प्रयोजन को सफल बना रही है।

हमारे देश में परिवार प्रथा को बहुत ऊँचा स्थान दिया गया है। ऋग्वैदिक काल में भी राज्य की पहली इकाई परिवार को बताया गया है परिवार से क्रमशः कुल, कुलप, ग्राम, जन, जनपद और राष्ट्र का निर्माण हुआ। अतः हमारी सस्कृति की मूल आधारशिला में भी परिवार प्रथम स्थान पर है, परन्तु वर्तमान् समय में पारिवारिक झगड़ों और हिंसा के कारण इसे एक अलग स्थान प्रदान कर के परिवार के विघटन को ज्यादा से ज्यादा रोका जा सके, इसके लिए भारत सरकार द्वारा कानून बना कर उसकी सहायता से रोकने का प्रयास किया गया है। जब फैमिली कोर्ट नहीं बना था तब पारिवारिक मामलों को सिविल कोर्ट में देखा जाता था। किन्तु पारिवारिक मामलों की प्रकृति अन्य सिविल मामलों से अलग होती है। परिवार एक मामलों को सिविल मामलों की तरह नहीं निपटाया जा सकता, इसलिए ही परिवारिक मामलों से सम्बंध में अलग व्यवस्था फैमिली कोर्ट के रूप में हमारे कानून में लागू की गयी है। कुटुम्ब न्यायालय भारत सरकार द्वारा कानून के दायरे में ऐसा प्लेटफॉर्म या मंच है, जिसके अन्दर कोई भी अपनी पारिवारिक समस्या झगड़ा आदि खत्म कर सकता है, अपनी बातें स्वयं रख सकता है और समुचित समाधान प्राप्त कर सकता है। पारिवारिक न्यायालय सिविल न्यायालय से कैसे अलग है यह हम इससे समझ सकते हैं कि परिवार न्यायालय की स्थापना का मूल उद्देश्य ही अलग है यह विवाद को दोनों पक्षकारों द्वारा समझौते से पूर्णतया समाप्त करने पर बल देता है। इसके लिए पक्षकारों के मध्य काउंसलिंग करायी जाती है, जिससे मध्यस्थ या जज के माध्यम से बातचीत से विवाद को खत्म किया जा सके ना कि सिविल न्यायालय में चलने वाले मामलों में कानूनी दाँव–पेंच में उलझा कर उन्हें लंबा खींचा जा सके।

eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 08, Issue 02, July 2025

फैमिली कोर्ट एक्ट 1984 में यह प्रावधान किया गया है कि परिवार न्यायालय में ऐसे व्यक्ति को न्यायाधीश बनाया जाता है, जो परिवार संस्था की रक्षा और बालकों के कल्याण के लिए प्रतिबद्ध है और साथ ही वह व्यक्ति समझौता करवाने के लिए योग्य व अनुभवी होता है। (कुटुम्ब न्यायालय की धारा 9 में)। इस फैमिली कोर्ट में न्यायाधीश पक्षकारों के मध्य सबसे पहले समझौता करने का ही प्रयास करेगा और समझौते की सम्भावना होने पर मामले की कार्यवाही स्थगित कर देगा, ताकि विवाद समाप्त किया जा सके। इसके अतिरिक्त परिवार न्यायालय परिवार कल्याण के लिए कार्य करने वाली संस्थाओं से मिलकर कार्य कर सकते हैं। ऐसे लोगों से भी सहयोग प्राप्त कर के कार्य कर सकते हैं जिनका पेशा ही सामाजिक कल्याण करना है। (परिवारिक न्यायालय की धारा 15 में)। यहाँ यह समझने योग्य बात है कि कुटुम्ब न्यायालय में झगड़ों को समाप्त करने के लिए प्रयास किया जाता है ना की उसको और लंबा खींचने या किसी को सजा दिलाने हेतु होता है।

परिवार न्यायालय में कोई भी पक्षकार अधिकार स्वरूप वकील नियुक्त नहीं कर सकता, हर बार पक्षकार को स्वयं उपस्थित रहना पड़ता है और वह अपना पक्ष स्वयं ही प्रस्तुत करता है। केवल कुछ मामलों में जहाँ न्यायाधीश आवश्यक समझता है और उसे लगता है, कि पक्षकार स्वयं ठीक ढंग से अपने पक्ष को नहीं रख सकता या रख पा रहा है, तो वह किसी वकील को न्याय मित्र नियुक्त कर सकता है जो पक्षकार के पक्ष को सही रूप से न्यायाधीश के सामने प्रस्तुत कर सके। कुटुम्ब न्यायालय में वकील की तरफ से वकालतनामा भी नहीं दिया जा सकता है, इसका कारण यह है कि वकील कानून का विशेषज्ञ होता है। वह जब भी किसी पक्षकार का प्रतिनिधित्व करता है तो वह हर बात को कानूनी पहलू से सोचता है, जबकि पक्षकार जैसी बात होती है उसी के हिसाब से अपनी बात को रखता है अगर कानून विशेषज्ञ बात को रखता है तो वह न्यायालय के समक्ष असली कारणों को नहीं ला पता है और ना ही उसे परिवार के सदस्यों या पक्षकार से कोई भावनात्मक लगाव होता है।

अतः जब तक कोर्ट को वास्तविक कारण का पता ना चले तो किसी वाद में समझौता करवाना सम्भव नहीं होता है। इसीलिए कुटुम्ब न्यायालय में यह खास प्रावधान किया गया है कोई भी पक्षकार अपना प्रतिनिधि वकील को नहीं रख सकता है। (कुटुम्ब न्यायालय 1984 की धारा 13 में)। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है जो कुटुम्ब न्यायालय को सिविल न्यायालय से बिल्कुल अलग करती है, कि सिविल कोर्ट में कोई भी व्यक्ति शांतिपूर्ण रूप से बैठकर कोर्ट की कार्यवाही देख व सुन सकता है। परन्तु पारिवारिक न्यायालय किसी मामले में आवश्यक समझने या किसी पक्षकार के आग्रह करने पर कार्यवाही बंद कमरे में करने का आदेश भी दे सकता है अर्थात् पक्षकारों के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को उसे समय कोर्ट में आने की अनुमति नहीं होती है। (फैमिली कोर्ट 1984 की धारा 11)। इसके अतिरिक्त कुटुंब न्यायालय की कार्रवाई के समय साक्ष्य के सम्बन्ध में भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 का कठोरता से पालन किया जाना आवश्यक नहीं है। जो कुटुम्ब न्यायालय जरूरी समझता है उसे लगता है इससे दोनों पक्षकारों के मध्य विवाद निपटाने में मदद मिलेगी वह उस कथन, डॉक्यूमेंट, जानकारी या बात को साक्ष्य के रूप में स्वीकार कर सकता है। भले ही वह भारतीय साक्ष्य अधिनियम के अन्तर्गत आती हो या ना आती हो। यह भी कि किसी व्यक्ति के बयानों को ज्यों का त्यों लिखा जाना आवश्यक नहीं है। अन्य न्यायालय में किसी भी व्यक्ति का बयान ज्यों का त्यों ही लिखते हैं, परन्तु कुटुम्ब न्यायालय पक्षकारों की बातों को पूरा सुन सकता है और केवल सार को लिख सकता है, पूरी बात परिवार न्यायालय द्वारा लिखा जाना आवश्यक नहीं है। कुटुम्ब न्यायालय में शादी रद्द करने या समाप्त करने के मामले, विवाह विच्छेद के मामले या शादीशुदा की एक दूसरे की प्रॉपर्टी

eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 08, Issue 02, July 2025

को लेकर झगड़ा या ज्वाइंट प्रॉपर्टी है तो उससे सम्बन्धित विवाद, बच्चों पर अधिकारिता के मामले या गुजारे भत्ते का मुकदमा लाया जा सकता है। विक्टिम की माँग पर उन्हें बच्चों की कस्टडी दी जा सकती है। न्यायालय कानून का उल्लंघन होने की स्थिति में सजा या जुर्माना या दोनों भी कर सकता है यहां यह भी प्रावधान है कि वाद का निपटारा मजिस्ट्रेट को 60 दिन के भीतर करना होता है।

भारत का संविधान नैसर्गिक न्याय के इस सिद्धान्त का पालन करता है, जिसमें सौ दोषी भले छूट जाए, लेकिन एक भी निर्दोष को सजा नहीं मिलनी चाहिए। इस सन्दर्भ में महिलाओं के खिलाफ अपराधों की रोकथाम के लिए बने कानूनों के दुरुप्रयोग आदि की शिकायतें भी बड़ी संख्या में आयी हैं, अतः कानून निर्माता के समक्ष एक विकराल चुनौती यह भी है कि जहाँ हर तरह की हिंसा से महिलाओं को मुक्त किए जाने हेतु सतत् कोशिश की जाए, वही इस बात पर ध्यान देना होगा कि इन कोशिशों से किसी निर्दोष का जीवन तबाह ना होने पाए। ऐसा कोई कानून केवल बदला लेने का उपक्रम बन कर ना रह जाए, अतः इस और भी ध्यान देने की जरूरत है। जैसा कि हम वर्तमान समय में दहेज कानून के सम्बन्ध में देख रहे हैं जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा कई सारे दिशा निर्देश जारी किए जा चुके हैं और माननी उच्चतम न्यायालय इस पर चिंता भी जता चुका है।

इतनी प्रतिकूलताओं के बावजूद उम्मीद की किरण शेष है, घरेलू हिंसा के खिलाफ कानूनों के अलावा नारी सशक्तिकरण हेतु की गई अन्य तरह की कोशिश भी कमोबेश रंग ला रही हैं। संविधान के 73वें और 74वें संविधान संशोधन 1992 के अधिनियमों के द्वारा पंचायत में एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित किए जाने के भी सकारात्मक परिणाम सामने आ रहे हैं, केवल इन कोशिशों से 10 लाख से अधिक महिलाएं सक्रीय राजनीति में आई है। इसी तरह संसद और विधानमंडलों में महिलाओं के लिए आरक्षण के प्रावधानों को भी ज्यादा समय तक रोका जाना संभव नहीं होगा, उसके बाद और भी ज्यादा संख्या में महिलाएं राजनीति की मुख्य धारा से जुड़ने के लिए सामने आयेंगी। ऐसी कोशिशों से जब महिलाएं खुद सफल होगी तो ऐसी हिंसाओं के स्वतरू समाप्त हो जाने की उम्मीद है।

घरेलू हिंसा को खत्म करने का प्रयास सिर्फ कानून और न्यायालय द्वारा ही संभव नहीं है, इसके लिए समाज को अपनी पुरुषवादी सोच व रूढवादिता को छोड़कर आगे बढ़ना होगा और भारत की आधी आबादी जो महिलाओं के रूप में है, उसे समुचित स्थान प्रदान करना होगा क्योंकि यह मुद्दा सिर्फ सामाजिक रूप से ही नहीं वरन् यह भारत की प्रगति से जुड़ा हुआ है। आज विकसित देश इसलिए विकसित हैं कि वहां महिलाएं पुरुषों से कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है अगर समाज में अगर घरेलू हिंसा जैसी समस्याएं रहेंगी और परिवार जो समाज की मौलिक इकाई है या हम कह सकते हैं यह समाज की नींव है। जब परिवार कमजोर होगा तो समाज कमजोर होगा और समाज कमजोर होगा तो देश कमजोर होगा और वह देश प्रगति के पथ पर आगे नहीं बढ़ पाएगा, इसलिए इस मुद्दे को मात्र कानून के संकुचित दायरे में न रखकर इसे देश, समाज और सभी लोगों को संयुक्त रूप से इस दिशा में आगे कदम बढ़ाना होगा, तभी हमारा राष्ट्र और समाज उन्नति कर सकेगा।

सन्दर्भ सूची–

1. घरेलू हिंसा अधिनियम 1984 बेयर एक्ट
2. भारतीय संविधान में वर्णित मूल अधिकार एवं कानून
3. माधुर यस यस, समाज मनोविज्ञान

eISSN 2581-8996
ONLINE
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED JOURNAL
Volume 08, Issue 02, July 2025

4. पुलिस औप मानवाधिकार, बी. ओल बोहरा
5. मानवाधिकार सिद्धांत एवं व्यवहार दृडां. देवेंद्र पाल सिंह तोमर पृष्ट संख्या – 39,40
6. मानवाधिकार सिद्धांत एवं व्यवहार दृडां. देवेंद्र पाल सिंह तोमर पृष्ट संख्या – 42